P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-5 * (Part-1) January- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारत में दलित शिक्षा का स्तर

तपस्या चौहान
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
दयालबाग एजूकेशनल इन्स्टीट्यूट
आगरा, भारत

सारांश

शिक्षा वह साधन है जो प्राणो को उसके क्रियास्थल से अनुशासित कर एक सभ्य समाज के निर्माण हेतु उत्तरदायी है। व्यक्ति समाज की परिधि में रहकर क्रियाकलाप करता है। यह क्रियाकलाप समाज के उत्थान हेतु सर्वांगीण विकास की भावना को लक्षित करते हुए आगे बढ़ता है किंतु इसी समाज का एक हिस्सा शिक्षा के अभाव में पशुवत् जीवन यापन करने हेतु विवश है। हालांकि इस वर्ग के शिक्षा के स्तर को ऊपर उठाने के लिए कई प्रयास किये जा रहे है। किंतु इसका प्रभाव कुछ विशेष उपजातियों तक सीमित हो जाता है। इसी गंभीर विषय पर चर्चा की जा रही है। इस चर्चा में दलित शिक्षा के स्तर को आरम्भ से लेकर आधुनिक शैक्षिक स्तर तक संदर्भित किया गया है।

मुख्य शब्द : शिक्षा, दलित।

प्रस्तावना

अगाध कौशल से युक्त मनुष्य जीवन का लक्ष्य प्राप्त करने हेतु विभिन्न संघर्षों की परिसीमाओं को पार करते हुए नवीन आयामों की प्राप्ति के लिए नित नयी–नयी शिक्षाओं को ग्रहण करता है। ये वह शिक्षाएँ हैं जो मनुष्य को पशुवत क्रिया स्थल से ऊपर उठाते हुए उसके अस्तित्व को अन्य प्राणी जगत के धरातल से विलग कर एक सभ्य समाज की संस्थापना कराती है। इसी सभ्य समाज की परिधि के अंदर ही मानव अपने समाज के भीतर शिक्षा द्वारा प्रशस्त किये गये मार्ग को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। प्रयत्नशील प्रक्रिया ही उन परिवर्तनकारी कारकों के प्रति उत्तरदायी है जो मनुष्य जाति को विकास की ओर अग्रसर करती है। शिक्षा के माध्यम से ही मनुष्य एक समाज से दूसरे समाज की उन्नतशील क्रियाओं का आदान–प्रदान करता है। आरंभ में शिक्षा व्यक्तिगत रूप से मनुष्य अपने माता–पिता एवं परिवारीजन द्वारा प्राप्त करता है जा उसकी शिक्षा का प्रारम्भिक दौर होता है तत्पश्चात् शनैः शनैः वह विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय तक की शिक्षा यात्रा करता है। यह आवश्यक नहीं कि वह शिक्षा के विभिन्न सोपानों को पार करें क्योकि यह तो उसके आर्थिक स्तर पर निर्भर करता है। अतः शिक्षा के विषय में चर्चा करने से पूर्व उसका विहंगावलोकन करना होगा कि शिक्षा वास्तव में है क्या?

अध्ययन का उद्देश्य

भारत में दलित शिक्षा के स्तर का अध्ययन।

साहित्यावलोकन

शिक्षा मनुष्य के जीवन के विभिन्न पक्षों को विकास की ओर अग्रसर करने का निमित्त है। अंजू रानी ने शिक्षा की व्युत्पत्ति 'शिक्ष्' धातु में 'अ' प्रत्यय लगाने से मानी है जिसका अर्थ सीखना व सिखाना से लिया है। वैसे तो मनुष्य जीवन में अनुभवों द्वारा बहुत कुछ सीखता है परन्तु मनुष्य विद्यालय में जीवन को अनुशासित व विभिन्न क्षेत्रों में कौशल प्राप्त करने हेतु प्रवेश लेता है किन्तु समाज का एक वर्ग ऐसा भी है जो शिक्षा विहीन था तथा उसके उत्थान हेतु प्रयत्न किये जा रहे हैं। वह है दलित वर्ग। दलित का अर्थ वृहत हिन्दी कोश, भार्गव आदर्श हिन्दी कोश में रौंदा, कुचला हुआ आदि दिया गया है। माता प्रसाद ने दलितों के विषय में बताया है कि समाज का यह वर्ग मल उठाने, सफाई करने आदि का काम करता है। डॉ0 सुमनाक्षर का मानना है कि सर्वहारा वर्ग में दलित आ सकते हैं किन्तु दलित में सर्वहारा वर्ग नहीं आ सकता है।डॉ0 मीरा गौतम न दलितों को अस्मिता के लिये संघर्षरत् वर्ग के रूप में रेखांकित किया है। बृजमोहन सिंह ने दलित शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर को प्रस्तुत करते हुए शिक्षण में आरक्षण, निःशुल्क शिक्षा आदि के विषय में मत प्रस्तुत किये हैं जबकि रूपचन्द गौतम ने आजाद भारत में दलितों तक सुविधाओं का कितना हिस्सा पहुँचता है इस गंभीर विषय पर अपना मत प्रस्तुत किया है।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-5 * (Part-1) January- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

शिक्षा

समाज के मध्य व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का माध्यम शिक्षा ही है। शिक्षा शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की ''शिक्ष्'' धातु में 'अ' प्रत्यय लगाने से हुई जिसका अर्थ है सीखना अथवा सिखाना।''[1] अतः शिक्षा मनुष्य के सर्वांगीण विकास की वह प्रक्रिया है जो जीवन को अनुशासित एवं नियंत्रित करने का पुष्ट साधन है। यह सभ्य समाजीकरण के धरातल पर मानवीय विकास को उन्मुक्ता से विचरण करने से नियंत्रित कर सतुलित विकास की ओर अग्रसरित करने का निमित्त है जो समयानुरूप परिवर्तित होकर नित नये–नये आयामों को साथ लिए निर्विघ्न रूप से गतिशील रहता है। यह वही निमित्त है जो पूर्वाग्रहों से विरक्ति प्रदान करते हुए शिक्षितों को अनुशासित, सामाजिक सहयोग कर्त्ता, सहनशीलता व त्याग जैसे गुणों से अलंकृत करता है। उचित मार्गदर्शन व सामाजिक विकास के तत्वा से साक्षात्कार शिक्षा द्वारा ही संभव हो पाता है। यह प्रशिक्षण समाज अंशियों (समाज के अंश अर्थात् व्यक्ति) के मध्य स्वस्थ्य मनोवृतियों का विकास कर राष्ट्र को उन्नतशील बनाने का सतत् प्रयास मात्र न रहकर एक उत्तरदायित्व भी है जो समाज के उज्जवल भविष्य की प्राप्ति हेतु महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।

राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास का मेरूदण्ड शिक्षा ही है। शिक्षा के महत्व को स्पष्ट करते हुए महात्मा गांधी ने कहा है कि ''शिक्षा से मेरा तात्पर्य बच्चे के शरीर, मन और आत्मा में विद्यमान सर्वोत्तम गुणों के सर्वांगीण विकास से है।''2 राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास व उन्नति हेतु शिक्षित समाज का होना आवश्यक है। समाज का निर्माण व्यक्तियों द्वारा होता है। अपनी बाल्यावस्था से ही स्वस्थ्य शिक्षा द्वारा स्वस्थ्य मनोवृत्तियों का निर्माण शिक्षा के माध्यम से ही होता है। प्रसिद्ध फ्रांसीसी समाजशास्त्री दुर्खीम का शिक्षा के विषय में मत है कि ''शिक्षा अधिक आयु के व्यक्तियों द्वारा उन लोगों के लिए कार्यान्वित वह क्रिया है जो कि अभी सामाजिक जीवन में प्रवेश करने योग्य नहीं है। इसका उद्देश्य शिशु म उन भौतिक, बौद्धिक और नैतिक विशेषताओं को जागृत एवं विकसित करना है जो उसके सम्पूर्ण समाज और पर्यावरण के लिए आवश्यक है।''3 अतः कहा जाए कि बाल मन पर सुशिक्षा का प्रभाव राष्ट्र के भविष्य का निर्माता सिद्ध होता है यह कथन अतिश्योक्ति न होगा। बाल्यावस्था से ही शिक्षा प्रक्रिया मनुष्य को जीवन के विभिन्न स्तर पर प्रभावित करते हुए उनके भीतर भौतिक, बौद्धिक व नैतिक गुणों के आधारभूत तत्वों से सामजस्य स्थापित कर एक प्रशिक्षित जीवन प्रणाली को निर्मित करती है। इस निर्माण प्रक्रिया में समाज महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है यह समाज विभिन्न वर्ग व वर्णों में विभाजित है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्णों में यह सामाजिक व्यवस्था टिकी हुई है। जिनमें से चौथा वर्ण शूद्र जिसे वर्तमान में दलित संज्ञा प्रदान की गई है उसे वर्षो तक शिक्षा से वंचित रखा गया। अब प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों हुआ? इसके पीछे के क्या कारण है? इन सभी प्रश्न का उत्तर खोजने से पूर्व दलित विषयक अवधारणा का संक्षिप्त अवलोकन आवश्यक है–

दलित

समाज द्वारा हाशियाकृत वे लोग जो सदियों से सामाजिक आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक अधिकारों से वंचित कर दिये गये हो वे दलित ही ह। समाज द्वारा गठित एक ऐसी व्यवस्था जिसने एक वर्ग विशेष को पीढ़ी दर पीढ़ी सेवा करने का कर्त्तव्य प्रदान कर कर्म के स्थान पर जन्म को वरीयता देते हुए दलित जाति का निर्माण कर डाला। इन दलितों में दो प्रकार के शूद्र शामिल हुए एक बहिष्कृत और दूसरे अति बहिष्कृत। बहिष्कृत वे लोग थे जो समाज में रहकर ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के सेवक हुआ करते थे और दूसरी ओर वे अतिबहिष्कृत समुदाय था जो समाज से दूर अलग बस्तियों में रहता था। केवल सेवा हेतु वह सवर्ण समाज में आता था और कार्य समाप्ति पर अपनी अलग बस्तियों में चला जाया करता। इस सभी क्रिया कलापों का प्रारंभ आर्यों के आगमन से आरम्भ होता है। भारत के मूल निवासियों द्रविड़ों पर आक्रमण कर वर्चस्व की स्थापना आर्यो द्वारा की गयी। परास्त हुआ वर्ग विजयी वर्ग की सेवा का कार्य करता और यहीं से आरंभ होता है दलित वर्ग का संघर्ष। दलित वर्ग के विषय में चर्चा करने से पूर्व दलित के विषय में विभिन्न विद्वानों के विचार प्रस्तुत करना अनिवार्य है–

1. दलित – 'रौंदा, कुचला, दबाया हुआ, पदाक्रांत– हिंदुओं में वे शूद्र जिन्हें अन्य जातियों के समान अधिकार प्राप्त नहीं हैं।'[4]
2. ''दलित– दला हुआ, खंडित विदीर्ण, कुचला हुआ, नष्ट किया हुआ।''[5]
3. Depressed- dispirited or miserable, psychological suffering from depression.

उपरोक्त दिये गये कोशगत् अर्थ द्वारा यही स्पष्ट हो रहा है कि दलित अधिकारों से वंचित समाज द्वारा बहिष्कृत वह वर्ग विशष है जिसे सदियों से विशेष वर्ग द्वारा पीछे धकेला गया जिसे सामान्य जीवन से विलग जीवनयापन हेतु बलपूर्वक विवश किया हो। सैकडों वर्षों से शोषण के शिकार होते आये इस वर्ग विशेष को निम्न स्तरीय जीवनयापन हेतु भी अनेक प्रताड़नाओं का सामना करना पड़ता है जो वर्तमान समय तक इस जातीय दंश को झेल रहा है। यह दंश सवर्णों द्वारा दलितों को पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तातंरित होता आ रहा है जिस कारण दलित वर्ग अधिकारों के प्रति किसी भी प्रकार का कोई आंदोलन नहीं कर पा रहा था किंतु परिवेश के प्रति असंतोष विद्रोह का प्रतिफल है जिसे आंदोलन के रूप में विभिन्न समाज सुधारकों द्वारा चलाया गया। परिणामस्वरूप दलितों की समस्याओं, पीड़ाओं व प्रताड़नाओं ने स्वरमुखरित किया।

दलित शब्द का प्रयोग कुछ समय पूर्व से ही किया जाने लगा है। इससे पूर्व इन्हें शूद्र की संज्ञा प्रदान की गयो थी। अबहिष्कृत शूद्रों को छोटे–छोटे व्यवसाय व कार्य कर जीविका चलाने का अधिकार प्राप्त था किंतु बहिष्कृत शूद्र सामाजिक व धार्मिक स्तर पर पूर्णतः विलग किये गये थे। अबहिष्कृत शूद्रों का मंदिर में प्रवेश व

धार्मिक ग्रन्थों का श्रवण पूर्णतः वर्जित था। समाज से दूर जहां सवर्णों की दृष्टि भी न पड़े ऐसे स्थानों पर इन्हें रखा जाता था। इन्हें 'महाशूद्र' भी कहा जाता है। ''ऐसा कहा जाता है कि इन्होंने आर्यों से बहुत समय तक संघर्ष किया और जब ये परास्त हुए तब आर्यों ने इन्हें 'अस्पृश्य' करार दे दिया गया और इनका मरे हुए पशुओं को उठाने, मल उठाने, सफाई करने, कपड़ा धोने आदि निकृष्ट कार्य करने को विवश कर दिया।''[7] आगे चलकर इन्ही को दलित संज्ञा प्रदान की गई। इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर द्वारा किया गया जिसका अर्थ था– जिसे तोड़ा गया हो तथा जिसे उच्च सामाजिक स्तर के लोगों द्वारा साजिश के तहत व जानबूझकर रौंदा गया हो। दलित कोई जाति विशेष नहीं है अपितु वह तो वे अस्पृश्य लोग हैं जिन्हे समाज से अलग कर निम्न स्तर का जीवन यापन हेतु विवश कर दिया है। यह सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व राजनैतिक रूप से शोषित वर्ग है जो समाज में समानत्व का अधिकारी है। ''दलित शब्द मार्क्स प्रणीत सर्वहारा शब्द के लिए समानार्थी लगता है। लेकिन इन दोनों शब्दों में पर्याप्त भेद भी है। दलित की व्याप्ति अधिक है तो सर्वहारा की सीमित है। प्रत्येक दलित व्यक्ति सर्वहारा के अन्तर्गत आ सकता है। लेकिन प्रत्येक सर्वहारा को दलित कहने के लिए बाध्य नहीं हो सकते, अर्थात् सर्वहारा की सीमाओं में आर्थिक विषमता का शिकार वर्ग आता है, जबकि दलित विशेष तौर पर सामाजिक विषमता का शिकार होता है।''[8] मोहनदास नैमिशराय का यह वक्तव्य उन सभी शंकाओ से मुक्ति का मार्ग है। जब मार्क्सवाद और दलित जोड़ा जा रहा हो। दलित को और अधिक स्पष्ट करते हुए डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कहा है कि ''दलित जातियाँ वे है जो अपवित्रकारी होती हैं। इनमें निम्न श्रेणी के कारीगर, धोबी, मोची, भंगी, बसौर, सेवक जातियाँ जैसे चमार, डँगारी, मरे पशु उठाने के लिए सउरी प्रसूतिगृह का काम करने वाले ढोला, डफली बजाने वाले आते है। कुछ जातियाँ परंपरागत कार्य करने के अतिरिक्त कृषि मजदूरी का भी कार्य करती हैं। कुछ दिनों पूर्व इनकी स्थिति अर्द्धदास, बँधुआ, मजदूर जैसी रही है।''[9] अतः दलित शब्द का प्रयोग धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक व शारीरिक शोषण का शिकार हुआ वह वर्ग है जिसे सभी प्रकार के अधिकारों से वंचित रखा गया। ''भाषावाद अलगाववाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, को 'दलित' शब्द नकारता है। उन्हें सामाजिक पहचान देता है जिसकी पहचान इतिहास के पृष्ठों से मिटा दी गई है जिनकी संस्कृति, ऐतिहासिक धरोहर कालचक्र में खो गई। इस देश का मेहनतकश जो खेत– खलिहान से लेकर कारखानों तक हर क्षेत्र में अपने पसीने से एक नए इतिहास का निर्माण कर रहा है। उस इतिहास का जिसमें भारत के नव–निर्माण की छवि नए का आह्वान कर रही है। मानवीय अधिकारों से वंचित सामाजिक तौर से जिसे नकारा गया हो वही दलित है।''[10]

दलितों की स्थिति में सुधार हेतु विभिन्न समाज सुधारकों ने अपना योगदान दिया किंतु बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर के अथक प्रयासों के फलस्वरूप दलितों को उनके अधिकार मिलने लगे हैं किंतु अभी तक दलितों को समाज में समानत्व की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। आज भी लोगों के हृदय में भेद–भाव की प्राणवायु संचरित है जो कि अत्यंत पुष्ट व मजबूत है जिसे बदलने के लिए केवल दलितों को ही नहीं अपितु शिक्षित वर्ग को भी भेद–भाव का दूर कर हाशियाकृत समाज को हृदयंगम करने हेतु मन–मस्तिष्क दोनों से निश्छल प्रयास करने होंगे।

दलित शिक्षा का प्रारम्भिक स्वर

सदियों से शिक्षा से वंचित यह वर्ग भारत जैसे देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा है। जबकि शिक्षा को ही व्यक्ति व समाज के उत्थान का बीज माना गया। इसके बावजूद दलितों को शिक्षा की परिधि के दूर–दूर तक भटकने न दिया। ''आश्चर्य ही नहीं दुख भी है कि सदियों में भारत जैसे महान देश को एक बहुत बड़ा सामाजिक वर्ग दलित (अनुसूचित) वर्ग उत्थान के मूल मंत्र 'शिक्षा' से वंचित रहा है। वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था गुण तथा कर्म पर आधारित थी।''[11] किन्तु उत्तर वैदिक काल का आगमन शूद्रों हेतु शिक्षा के साथ–साथ जीवन के विभिन्न सोपानों के लिए काल बनकर रह गया। वैदिक काल में धार्मिक व सामाजिक स्तर शैक्षिक तत्वों से वंचित न था किंतु उत्तर वैदिक काल के उत्तराद्ध में मनुष्य का जीवन स्तर कर्म के स्थान पर जन्म पर आधारित हो गया। शिक्षा व अर्थ के अभाव ने शूद्रों/दलितों को निम्नतम् स्तर पर पहुँचा दिया। वर्षों तक दलितों का कार्य ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की सेवा करना रहा। शिक्षा ग्रहण करना दलितों के अधिकार क्षेत्र से परे हो गया किंतु बौद्धकाल में दलितों हेतु शिक्षा के मार्ग एक निश्चित सीमा तक प्रशस्त हुए किंतु धर्माधारित इस्लाम के आगमन पर मुगलों द्वारा दलितों की शिक्षा का अधिकार क्षेत्र समाप्त कर दिया। इस विषय में ब्रज मोहन सिंह का मत है कि – ''बौद्ध काल में कभी–कभी शूद्रों को बौद्ध बिहारों व मठों में जाकर शिक्षा ग्रहण करने की स्वतन्त्रता थी परन्तु यह भी मुगलकाल में शिक्षा का अधिकार धार्मिक होने के कारण समाप्त हो गयी। ''[12] इसके पश्चात् स्वार्थ सिद्धि हेतु अंग्रेजों ने शिक्षा का अधिकार प्रत्येक भारतीय को दिया। यह सत्य है कि अंग्रेजों ने भारत में अपनी नींव मजबूत करने और भारतीयों को पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े रखने के लिए भारत में विभिन्न स्कूल कॉलेजों की संस्थापना की। इसका लाभ दलितों को मिला। ज्योतिबा बाई फुले से लेकर बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर ने शिक्षा प्राप्त कर अपने अस्तित्व व स्वाभिमान के लिए दलित आंदोलन चलाये। दलित शिक्षा का मिशन अनवरत् चलता रहा और आज भी चल रहा है। बाबा साहब भीमराब अम्बेडकर द्वारा निर्मित ''भारतीय संविधान में इस वर्ग के लिए शिक्षा प्राप्ति के लिए विभिन्न उपबंधों की व्यवस्था की गयी, साथ ही साथ शिक्षा को मूलभूत अधिकार का रूप प्रदान किया गया। शिक्षा ग्रहण करने के लिए दलित (अनुसूचित) वर्ग को विभिन्न सुविधायें जैसे– शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश हेतु आरक्षण, निःशुल्क शिक्षा और वेशभूषा, छात्रावास व पुस्तकें, छात्रवृत्ति, मध्यकाल में

भोजन आदि प्रदान करने की व्यवस्था की गई।''[13] इस प्रकार की व्यवस्था का मूल उद्देश्य दलितों के मध्य शिक्षा के प्रति नवजागरण का संचार करना है ताकि वे अपने अस्तित्व व अस्मिता के मूल्यों को पहचानकर इस समाज में अपने स्वाभिमान जड़ित नवजीवन को प्राण वायु द्वारा जीवित रखें और इस सभ्य समाज के भीतर अपनी उपस्थिति दर्ज करवा सकें।

वर्तमान भारत के दलित शिक्षा का स्तर

अनेक उपजातियों में विभक्त दलित समाज की कुछ ही जातियों में शिक्षा का अरूणोदय हुआ है। शेष सभी उपजातियों का पुश्तैनी काम ही जीविकोपार्जन का साधन बना हुआ है। अनेक दलितोन्मुख योजनाओं को लागू किया जा रहा हैं किन्तु जिन लोगों के लिए इन योजनाओं का निर्माण किया जाता है उनके लिए इतने नियम व शर्ते बना दी जाती है कि उनके लिए योजनाओं का लाभ केवल कल्पित ही रह जाता है और वे अपने बच्चों को शिक्षा हेतु सरकारी स्कूलों में भेज भी देते हैं तो ''यदि इनके बच्चों को स्कूल से एक या दो किलो अनाज मिले तो माँ–बाप स्कूल भेजने की अनुमति दे सकते हैं, मगर अनाज देगा कौन? सभी जगह भ्रष्ट अधिकारियों का जमघट है। यही जमघट रूपये का 85 प्रतिशत खाकर शेष 15 प्रतिशत जरूरतमद तक पहुँचने देता है।''[14]

सरकारी विद्यालयों में शिक्षक तो गैर–दलित ही होते है वे दलितों को ऐसा कोई ज्ञान नहीं देना चाहेगें जिससे कि वे पढ़ लिखकर उनके समान हो जाएं यह तो उनकी कलुषित मानसिकता का ही प्रति फल है जो नित–नित बेबुनियादी बातों के माध्यम् से दलितों को उचित शिक्षा नहीं दे पाते हैं। यदि कोई दलित अध्यापक समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझता है तो उसे गैर–दलित लोग एक तनावग्रस्त परिवेश में लाकर खड़ा कर देते हैं। यदि दलित प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर विद्यालय से महाविद्यालयों में प्रवेश हेतु जाता है तो उसे सरकार द्वारा दिये आरक्षण का लाभ तो प्राप्त हो जाता है किंतु उनके सहपाठी ऐसे छात्र–छात्राओं को हेय दृष्टि से देखने लगते हैं। यह समस्या मुख्य रूप से सामने आती है।

वर्तमान में शैक्षिक सुविधाओं का उपयोग दलितों द्वारा किया जा रहा है किंतु उच्च शिक्षा के लिए दी जाने वाली फैलोशिप की अनियमितता छात्रों को निराशा के घेरे में डाल देती है। सरकार द्वारा दी जाने वाली विभिन्न प्रकार की स्कॉलरशिप व फैलोशिप की जानकारी अल्प लोगों तक ही पहुँच पायी है जिस कारण उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्र–छात्राओं के समक्ष आर्थिक संकट उत्पन्न हो जाता है और वह शिक्षा की अपेक्षा जीविकोपार्जन को वरीयता देने लगते है जो समाज में दलित व गैर–दलित के शैक्षिक स्तर को असंतुलित कर देता है। सरकार तकनीकि शिक्षा,रोजगारपरक शिक्षा व व्यवसाय शिक्षा को बढ़ावा तो दे रही है किंतु इसमें भो आर्थिक संकट से जूझ रहे दलितों को तो यह दिवास्वपन ही लगने लगता है। अतः सरकार को इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि अभी भी दलितों का शैक्षिक स्तर काफी कम है हालांकि विगत वर्षों की अपेक्षा शिक्षा स्तर में बढ़ोत्तरी तो हुई है लेकिन अभी यह समस्त दलितों की उपजातियों तक संवहित होना बाकी है।

निष्कर्ष

निष्कर्षत : कहा जा सकता है कि आज समय है देश को एकीय सूत्रबद्ध करने का ताकि देश उन्नतिन्मुख हो समानत्ववादी राष्ट्र बन सके। सदियों से उपेक्षित वर्ग को उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करने हेतु स्वस्थ मानसिकतायुक्त शिक्षण की आवश्यकता है जो सभी के सहयोग की पात्र है। विगत वर्षों में सरकारी–गैर सरकारी संस्थाओं एवं योजनाये उसके भरसक प्रयासों के परिणामस्वरूप आज दलित शिक्षा का स्तर आंशिक रूप में फलित हो रहा है। आज डॉक्टर, इंजीनियर आई.ए.एस. ऑफिसर्स दलित दिखायी पड़ते हैं किंतु कुछ चुनिन्दा ही हैं। अतः आवश्यकता है इसी प्रकार की दलित प्रतिभाओं को शिक्षा के माध्यम से भारत का अरूण बनाने की। इसके लिए सरकार के साथ–साथ संस्थाओं संघों व आर्थिक रूप से सम्पन्न व शिक्षित दलितों का भी सहयोग अपेक्षणीय है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अन्जू रानी, शिक्षक और समाज (एक समाजशास्त्रीय अध्ययन) विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, गढ़वाल : पृ–2.

अन्जू रानी, शिक्षक और समाज (एक समाजशास्त्रीय अध्ययन) विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, गढ़वाल : पृ–2.

3. अन्जू रानी, शिक्षक और समाज (एक समाजशास्त्रीय अध्ययन) विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, गढ़वाल : पृ–2.

ज्ञानमंडल लि. वाराणसी : वृहत हिंदी कोश : पृ. 613.

सम्पादक : आर.सी. पाठक : भार्गव आदर्श हिंदी शब्दकोश : पृ. 348.

डेला थाप्सन : द कानसिअस ऑक्सफर्ड डिक्शनरी : पृ. 205.

माता प्रसाद : हिंदी काव्य में दलित काव्यधारा, पृ. 13.

डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर : दलित साहित्य और उसकी सीमाएं : पृ. 9.

भारतीय दलित साहित्य : संपादक विठ्ठल शिन्दे मराठी विशेषांक सितम्बर, पृ. 1.

मीरा गौतम : अंतिम दो दशकों का हिंदी साहित्य : पृ. 110.

अल्तेकर, प्राचीन भारतीय शिक्षा : नंद किशोर एण्ड ब्रादर्स, वाराणसी : पृ. 2.

ब्रजमोहन सिंह : समकालीन समाज में दलित : नील कमल प्रकाशन : दिल्ली, पृ. 98.

ब्रजमोहन सिंह : समकालीन समाज में दलित : नील कमल प्रकाशन : दिल्ली, पृ. 98.

रूपचंद गौतम : आजाद भारत में दलित : पृ. 102.